RESEARCH PAPER | Journalism | Volume : 4 | Issue : 7 | July 2014 | ISSN - 2249-555X



# British Sarkar ka Bhartiya Press ke Prati Damnatmak Drashtikon

## ब्रिटिश सरकार का भारतीय प्रैस के प्रति दमनात्मक दृष्टिकोण

KEYWORDS: समाचार पत्र, प्रैस, अधिनियम, सरकार, प्रतिबंध।

**Dr. Rajeshwer**

Journalist, Rohtak (Haryana).

**ABSTRACT** प्रस्तुत शोध पत्र ''ब्रिटिश सरकार का भारतीय प्रैस के प्रति दमनात्मक दृष्टिकोण (1799–1910)'' को लिखने का मूल उद्देश्य यह बताना है कि किस प्रकार ब्रिटिश काल में भारतीय प्रैस के विकास में ब्रिटिश सरकार ने अवरोध उत्पन्न किए। क्योंकि अंग्रेजों को यह भय था कि कही प्रैस उनकी शासन करने की स्वार्थकारी नितियों को उजागर न कर दे और भारतीयों में राष्ट्रीयता की भावना न पनप उठे। इस डर से उन्होनें भारतीय समाचार पत्र पत्रिकाओं पर समय–समय पर दमानात्मक प्रतिबंध लगाये जिनमें सर्वाधिक कठोरता देशी भाषा के पत्रों के प्रति दिखाई गई। परन्तु फिर भी भारतीय समाचार पत्र पत्रिकाओं ने धीरे धीरे विकास किया। इन प्रतिबंधों के बावजूद भी समाचार पत्रों तथा पत्रिकाओं ने भारतीयों में देश भक्ति तथा राष्ट्रीयता की भावना जगाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। प्रैस के योगदान का महत्व हमें मुख्यत राष्ट्रीय आन्दोलनों से ज्ञात होता है।

प्रस्तावना

भारत समाचार पत्रों का इतिहास यूरोपीय लोगों के आने के साथ–2 आरम्भ हुआ। पुत. र्गाली पहले लोग थे जो मुद्रणालय (छापारवाना) भारत में लाए और 1557 में गोआ के पादरियो ने पहली पुस्तक भारत में छापी। 1684 में ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने बम्बई में एक छापारवाना लगाया। समाचार पत्रों का आरम्भ 1780 ई0 में 'जेम्स आगस्टस हिक्कीं ने दी बगाल गजट' नामक समाचार पत्र से किया। शुरु में इन समाचार पत्रों का उद्देश्य केवल यूरोपीय लोगों का मनोरंजन करना था। उस समय लोकमत के बिगड़ने का कोई भय नही था। अतः आरम्भ में समाचार पत्रों को नियन्त्रण में रखने के लिए कोई कानून नहीं बने थे। परन्तु धीर–2 स्थिति में परिवर्तन आना शुरु हो गया। भारत में जैसें–जैसें राष्ट्रवाद एव प्रेस का विकास हुआ, उसी अनुपात में ब्रिटिश सरकार ने भारतीय समाचार पत्रों पर प्रतिबंध एवं अंकुश लगाया। प्रारम्भ से ही कम्पनी के अधिकारी यह नही चाहते थे कि उनके कुप्रशासन और शोषणकारी नीतियों का पर्दाफाश समाचार पत्रों द्वारा हो। इस लिए समाचार पत्रों पर अंकुश लगाना आवश्यक समझा। इस उद्देश्य से ब्रिटिश सरकार ने 1799 से 1910 तक जो प्रेस अधिनियम पारित किए उन का वर्णन इस प्रकार है :–

1. 1799 का समाचार पत्रों का परिक्षक अधिनियम :

लार्ड वैलेजली ने 1799 में सरकारी सेसर (सवाद नियन्त्रक) की नियुक्ति की जिसका कर्तव्य था प्रकाशनार्थ प्रत्येक वस्तु की जॉच करना।फ्रांस के आक्रमण के भय से वेलेजली यह सहन नहीं कर सफता था कि कोई समाचार पत्र ऐसे तथ्य प्रकाशित करे जो उसकी फ्रांस अथवा भारतीय रिवासतों के विरुद्ध किसी दुर्बलता को प्रकट कर दे। उसने 1799 में समाचार पत्रों का परिक्षण अधिनियम पारित कर दिया और सामाचार पत्रों पर युद्ध कालीन सेन्सर लागू कर दिया।

1. समाचार पत्र को सम्पादक मुद्रक और स्वामी का नाम स्पष्ट रुप से छापना पडता था।
2. प्रकाशक को प्रकाशित किए जाने वाले सभी तत्वों को सरकार के सचिव के सम्मुख पूर्व–परिक्षण के लिए भेजना होता था। इन नियमों को भंग करने पर तुरन्त उद्धासन का दण्ड मिलता था। 1807 में यह अधिनियम पात्रिकाओं ,पैम्फलेट तथा पुस्तको सभी पर लागू किया।

2. 1818 ई0 का नियम –

लार्ड हेस्टिग्ज (1813–1823) ने इस नियम को कठोरता से लागू नहीं किया और 1818 में प्रेस सेंसर शिप को समाप्त कर दिया गया परन्तु सामान्य नियम बनाकर उन विषयों की चर्चा पर रोक लगा दी जिनके कारण सरकार के अधिकार एवं जनहित को किसी भी रुप में क्षति पहुचने की आशंका हो। इससे प्रेस ने जो राहत की सांस ली, उससे पत्रों के विकास को कुछ बल मिला, जैसें 1822 में बांबे समाचार को प्रकाशन शुरु हुआ। 1818 के नियम के अनुसार सम्पादको को निम्न लिखित विषयों पर विचार प्रकट नहीं करने थे।

– कोर्ट ऑफ डाइरेक्टर्ज के कार्य अथवा इग्लैण्ड के उन अधिकारियों के कार्य जो भारत सरकार से सम्बन्धित है।
– वे विषय जो गर्वनर –जनरल, उसकी कौसिल के मैबरों सर्वोच्च न्यायालय के न्यायालय के न्यायाधीशों आदि से सम्बधित हो।
– उन विषयो को न छापना जिनसे स्थानीय लोगों में काई भय अथवा शंका उत्पन्न हो। इन रोको ये यह स्पष्ट है कि लार्ड हेस्टिम्स इस तथ्य को अच्छी तरह जानते थे कि यदि पत्रों पर से सम्पूर्ण रुप से सारे नियन्त्रण हटा लिए जाए तो निदेशक मण्डल की स्वीकृत प्राप्त न होगी। उन्होनें अपने मन्तव्यों में यह स्पष्ट कर दिया कि मैं यह चाहता हूँ कि प्रशासन में जनमत के प्रति एक जिम्मेदार रुख पैदा हो।

3. 1823 ई0 का अनुज्ञाप्ति अधिनियम

1823 में ऐडम्ज 1823–1828 (एमहर्स्ट) ने प्रैस के विरुद्ध फिर दमनात्मक कारवाई शुरु की। इसका राजा राम मोहनराय और उनके राष्ट्रवादी दोस्तों ने विरोध किया, लेकिन सुप्रीम कोर्ट को दी गई उनकी अर्जी नामंजूर हो गई और प्रैस पर प्रतिबंध लगे रहे। यह आदेश दिया गया कि सार्वजनिक सम्वाद तथा सरकारी कारवाईयों की आलोचना से सम्बन्धित कोई भी पत्र पुस्तिका या पुस्तक बिना लाईसेंस के प्रकाशित नहीं हो सकती। लाईसैंस प्राप्त करने के लिए एक हलफ नामा देना पडता था, जिसमें मुद्रक, प्रकाशक और मालिक का नाम देना जरुरी था। इस लाइसैंस को रद्द भी किया जा सकता था और बिना लाईसैन्स प्रकाशन पर 400 रुपये जुर्माना होता था। इस प्रकार सरकार की मर्जी के बगैर पुस्तकों तथा पत्रों के मुद्रण और छापे खाने के उपयोग को सजा के योग्य अपराध करार दिया गया। ऐडम्ज के इस आदेश के समर्थन में दिए तर्को से यह स्पष्ट था कि यह आज्ञा विशेषता उन समाचार पत्रों के विरुद्ध थी जो भारतीय भाषाओं में प्रकाशित अथवा भारतीयों द्वारा प्रकाशित होते थे। राजा राम मोहनराय को मिरात –उल–अखबार पत्रिका को बन्द होना पडा। ऐडम्ज की आशा के पश्चात केवल तीन बंगला और एक फारसी के समाचार पत्र कलकता से छपते रहे। जे. एस. बकिहांम को भी इंग्लैण्ड में उदासित कर दिया गया।

4. भारतीय समाचार पत्रों का स्वतन्त्र होना

1835 – लार्ड विलियम बैटिक अपने उदार विचारों तथा भारतीयों के साथ न्यायोंचित व्यवहार के लिए प्रसिद्ध है। उनके शासन काल में सामाचार पत्रों के प्रति उदार दृष्टिकोण अपनाया गया। परन्तु 1823 में नियम को रद्द करना चार्ल्स मेटकाफ (835–36) के समय ही सम्भव हुआ था। वह भारतीय समाचार पत्रों का 'मुक्तिदाता' कहलाए।

स्पष्टतया सरकारी अफसरों में दो गुट थे। एक गुट यह समझता था, जैसा कि सर टामस मुनरो के शब्दों में कहा जा सकता है कि स्वतन्त्र पत्रकारिता और विदेशीयों का राज ये दोनों बाते परस्पर विरोधी है और दोनों साथ–2 नहीं चल सकती। दूसरे गुट का मत इतना निराशावादी नहीं था। ऐसे लोगों में सर चार्ल्स ट्रेवलियन थे जो 'इन्डोफीलस' के छदम् नाम से पत्रों में लेख लिखते थे और उनका मत वह होता था कि सरकार के अधिकारियों पर जनमत का प्रभाव लाभदायक होता है। उनका कहना यह था कि प्रतिनिधि मूलक विधानसभा की अनुपस्थिति में इसके अलावा और कोई माध्यम नहीं है जिससे शासन के दुरुउपयोग पर रोशनी डाली जा सकती है और जनता की भावना जानी जा सकती है। लार्ड मैकाले जो सच्चे उदारवादी थे उन्होनें भी समाचार पत्रों की स्वतन्त्रता के लिए समर्थन किया। उनका तर्क यह था कि सरकार के पास देश में खतरे के समय अनन्त और निःसन्देह शक्ति है तो फिर शान्ति काल में ऐसे नियमों को बनाए रखने की कोई आवश्यकता नहीं है। अब एक ऐसा अधिनियम बनाया गया कि मुदक तथा प्रकाशक को अब केवल प्रकाशन के स्थान की निश्चित सूचना ही देनी थी। यह कानून 1856 तक चलता रहा और इसी काल में देश में समाचार पत्रों की संख्या में बहुत वृद्धि हुई।

5. 1857 की अनुज्ञप्ति अधिनियम

आपातकालीन स्थिति जो 1857 के विद्रोह के परिणाम स्वरुप उत्पन्न हो गई थी से निपटने के लिए लाईसेसिंग अधिनियम बनाया गया। लाईसेस के बिना मुदणालय स्थापित नहीं किया जा सकता था। किसी भी समय सरकार इसे रद्द कर सकती थी। किसी भी पुस्तक या पत्र का प्रकाशन बीच में रोका जा सकता था। यह अधिनियम एक वर्ष तक लागू रहा।

6. 1867 का पंजीकरण अधिनियम

1867 का समाचार पत्र तथा पुस्तकों के पजीकरण अधिनियम संख्या 25 से 1835 के मैटकाफ के अधिनियम को परिवर्तित कर दिया गया। इस अधिनियम का उद्देश्य मुद्रको

Volume : 4 | Issue : 7 | July 2014 | ISSN - 2249-555X

तथा प्रकाशकों के कार्य को नियन्त्रित करना था। इसके अनुसार यह निश्चित किया गया कि प्रकाशित होनें वाले प्रत्येक समाचार पत्र एवं पुस्तकों की प्रतियां सुरक्षित रखी जाए ताकि भविष्य में उसका निरीक्षण किया जा सके। प्रत्येक मुद्रित पुस्तक तथा समाचार पत्र पर मुद्रक प्रकाशन और मुद्रण स्थान का नाम होना आवश्यक था। इसके अतिरिक्त प्रकाशन के एक मास के भीतर पुस्तक को एक प्रति बिना मूल्य के स्थानीय सरकार को देनी होती थी। यह अधिनियम 1890, 1914, 1952 और पुनः 1953 में सशोधित किया गया। वहाबी आन्दोलन (1860–70) के कारण राजद्रोही लेखों पर प्रतिबंध लगा दिया गया तथा भारतीय दण्ड सहिता की धारा 129 में 124–ए जोड दी गई । जिस के तहत राजद्रोहियों को आजीवन निर्वासित अथवा जुर्माना का दण्ड दिया जा सकता था।

7. देशी भाषा समाचार पत्र अधिनियम 1878

1857 के महान विद्रोह की एक देन शासित और शासक जातियों के सम्बन्धों में कटुता थी। फलस्वरुप अंग्रेजी समाचार पत्र सरकार को सदैव समर्थन करते थे। देशी समाचार पत्र 1857 के पश्चात अभूतपूर्व मात्रा में बढे और वे अधिक मुखर थे तथा सरकार की अलोचना करते थे। भारतीय प्रेस ने 1870 के दशक में मजबूती से पैर जमाना शुरु कर दिया था। लार्ड लिटन (1876–80) के प्रशासन की तो उन्होनें खुलकर आलोचना की, खासकर 1876–77 के अकाल पीडितों के प्रति ब्रिटिश सरकार के अमानवीय रवैये की तो जबरदस्त आलोचना उन्होनें की। इससे ब्रिटिश सरकार की भौहे टेढी होना स्वाभाविक ही था। उसने अचानक इन अखबारों पर दमन की कुल्हाडी चलाई और 1878 में वर्नाकुलर प्रेस एक्ट लागू किया। यह कानून भाषाई अखबारों पर अंकुश लगाने के लिए बनाया गया था क्योंकि ब्रिटिश सरकार को उनकी ओर से ही बड़ा खतरा महसूस हो रहा था।

वजह साफ थी कि ये अखबार आम जनता में ब्रिटिश शासन के खिलाफ माहौल बनाने लगे थे। 1878 का वर्नाकुलर प्रेस एक्ट लागू लागू करने का निर्णय अचानक लिया गया था व इस मामले में बडी गोपनीयता बरती गई थी और लेजिस्टलेटिव कौसिल ने चन्द मिनटो की चर्चा के बाद ही इस विधयेक को पारित कर दिया था। इस कानून में यह प्रावधान किया गया था कि ''अगर सरकार समझती है कि कोई अखबार राजद्रोहात्मक सामग्री छाप रहा है या उसने सरकारी चेतावनी का उल्लंघन किया है, तो सरकार उस अखबार उसके प्रेस व अन्य सामग्री को जब्त कर सकती है। भारतीय भाषाओं के समाचार पत्रों ने इस अधिनियम का विरोध किया। परन्तु सरकार इन भाषाई पत्रों के एक अंश को अपनी और मिलाने में सफल हो गई। अंग्रेजी भाषाई प्रैस ने भी इस अधिनियम का विरोध किया। परन्तु पायनियर ने इस अधिनियम का पूर्ण रुप से समर्थन किया।इस अधिनियम को 'मुह बन्द करने वाला अधिनियम कहा गया। इस अधिनियम का सबसे घिनौना पक्ष यह था कि इसके अनुसार देशी भाषा तथा अंग्रेजी भाषा के समाचार पत्रों में भेद भाव किया गया और इसमें अपराधी को अपील करने का अधिकार नहीं था। इस अधिनियम के अध्ीन सोम प्रकाश, भारत मिहिर, ढाका प्रकाश, सहचर तथा अनेक अन्य समाचार पत्रों के विरुद्ध मामले दर्ज किए गए। यह अधिनियम अपने उद्देश्य में सफल रहा।

लार्ड रिपन भारत के गवर्नर जनरल के रुप में आए और इस कानून पर फिर से विचार हुआ। लार्ड रिपन ने छानबीन के बाद यह मतव्य दिया कि इस कानून की कोई जरुरत नही थी उन्होनें भारत सचिव को लिखा :–

मुझे इस बात से सन्तोष है और मैं आशा करता हूँ कि थोडे समय में यह मनहूस कानून रद्द किया जाएगा। मैं यह आशा नहीं करता कि मामला इतनी आसानी से तय होगा क्योंकि देखा गया कि स्थानीय अधिकारियों में से एक अच्छी बहुसंख्या इस कानून के संशोधन के पक्ष में नही थी। तथ्य यह है कि भारतीय अफसर पत्रों को अनिवार्य बुराई, समझते है और चाहते है कि जहॉ तक हो सके। इस बुराई को हद के अन्दर रखना चाहिए। भारत के हमारे अफसर स्वतन्त्र विचार व वाद विवाद को अच्छा नहीं समझते।

8. 1908 का समाचार पत्र अधिनियम

सरकार के विरुद्ध बढती हुई भावनाओं तथा कटु अलोचना को रोकने तथा राजनीति में उग्र दल के उदय एवं विकास से उत्पन्न स्थिति से निपटने के लिए 1908 में दी न्यूज पेपर्स ऐक्ट पास किया गया। 1908 ई0 के समाचार अधिनियम में जिलाधीश को किसी भी समाचार पत्र को बन्द करने तथा उनके छापेखाने की मशीनों पर भी कब्जा करने का अधिकार दे दिया गया। यदि उसके विचार में वह समाचार पत्र विद्रोह की भावना भडका रहा था। जिलाधीश के विरुद्ध केवल भारत सचिव को ही अपील की जा सकती थी। इस अधिनियम के विरुद्ध समाचार पत्रों – वेद मात्रम संध्या, युगातंर आदि को बन्द कर दिया गया।समाचार पत्रों के मुद्रक तथा प्रकाशकों को मुद्रणालय के जब्त होनें के 15 दिन के भीतर उच्च न्यायालय में अपील करने की अनुमति थी। इस अधिनियम के अधीन सरकार 9 समाचार पत्रों पर मुकदमें चलाए और सात मुद्रणालय जब्त कर लिये। इस प्रकार इन समाचार पत्रों की स्वाधीनता पर आधात किया। इस अधिनियम को बनाने की आवश्यकता सरकार को इसलिए भी अधिक लगी क्योंकि अंग्रेजी में प्रकाशित पत्रों की तुलना में भाषाई समाचार पत्रों का वितरण कही अधिक था। ट्रिब्यून तथा पैसा अखबार दोनों ही पंजाब के लोक प्रिय पत्र थे। पैसा अखबार (उर्दू) की वितरण संख्या 1902 में 13 हजार थी जब कि अंग्रेजी ट्रिब्यून की वितरण संख्या 1700 ही थी। बंगाली अत्यन्त लोकप्रिय पत्रों में था। अंग्रेजी में बंगाली तथा बंगला में हित वादी एक ही जगह से प्रकाशित होते थे परन्तु 1911 में बंगाली का वितरण केवल 6000 था। जब कि हितवादी की वितरण संख्या 30,000 थी।

9. 1910 का भारतीय समाचार पत्र अधिनियम

इसके अधीन जिलाधीश को किसी भी प्रचलित अथवा नए समाचार पत्र के प्रकाशन तथा छापेखाने के मालिक से 500 रुपये से 5000 रुपये की जमानत लेने का अधिकार दे दिया या। यह जमानत किसी भी सरकार विरोधी अथवा आपति जनक लेख लिखने पर जब्त हो जाती थी। पंजीकरण के साथ–2 जमानत रद्द की जा सकती थी। यदि प्रकाशक दोबारा पंजीकरण कराना चाहता है तो उसे इस अधिनियम के अधीन 10,000 रुपये जमानत के रुप में देने पड़ते। परन्तु इसके पश्चात भी यदि समाचार पत्र आपतिजनक सामग्री प्रकाशित करता तो सरकार इसके मुद्णालय समाचार पत्र या पुस्तक की सभी प्रतियों को जब्त कर सकती थी तथा उसका पंजीकरण भी रद्द कर सकती थी। इसके दो महीने के अन्दर प्रकाशक स्पेशल ट्रिब्युन के पास अपील भेज सकता था। प्रत्येक प्रकाशक को समाचार पत्र की दो प्रतिया बिना मूल्य सरकार को देनी थी और मुख्य बहि शुल्क अधिकारी को आपतिजनक सामग्री को भी जब्त करने का अधिकार दिया गया था।

अखबारों को न्यायालयों में अपील का अधिकार तो था लेकिन उसका कोई अर्थ भी न था। एक भारतीय न्यायालय के अंग्रेज जज, सर लारेन जेनकिस ने कहा है सैक्शन–4 की धाराएं बहुत व्यापक है, और इसमें उन सारी बातों का समावेश है जो कभी भी किसी भी आदमी के दिमाग में आ सकती है। कहना मुश्किल है कि कोई तेज चालाक आदमी किस हद तक सैक्शन का इस्तेमाल कर लेगा। इस का इस्तेमाल कुछ ऐसी भी किताबों के खिलाफ हो ही सकता है जो तारीफ के काबिल है दूसरों के आश्रित दयनीय स्थिति में रहने वाले गरीब लोगों पर भी इसके द्वारा आधात सम्भव है किसी वर्ग विशेष की तारीफ खतरे से खाली नही होगी। जो सत्साहित्य माना जाता है उसका अधिकाश तो निःसन्देह इसकी पकड़ में आ ही जाएगा।

सैक्शन 4 (1910) के प्रेस एक्ट का अनुमान है यह बाद में 1931 व 1932 के ऐक्ट्स में भी रखा गया। भारतीय हाईकोर्ट के एक अंग्रेज न्यायधीश की इस सम्मति से 1910 के प्रेस एक्ट की दमनात्मक प्रवृति स्पष्ट है। इस अधिनियम के अधीन 991 मुद्रणालयों और समाचार पत्रों के विरुद्ध कार्यवाही की गई इन में 286 को कडी चेतावनी दी गई और 703 मामलों में बडी–बडी जमानते ली गई इस अधिनियम के लागू होनें से पहले 5 वर्षो में लगभग 5 लाख रुपये की जमानते जब्त की गई।

अग्रेजी राज्य के विरुद्ध लिखने के लिए सब से प्रसिद्ध मुकदमा तिलक पर चलाया गया। केसरी के कुछ लेखों पर आपति करते हुए तिलक को 6 वर्ष के लिए काले पानी का दण्ड दिवा गया। तिलक पर मुकदमा चलाने से सरकार विरोधी अथवा समाचार पत्रों में कमी नहीं हुई बल्कि सरकार की नेकनीयत पर सन्देह अधिक बढा।उपरोक्त प्रैस एक्टों के बाद 1921, 1931 ई0 में भारतीय प्रेस आपातकालीन अधिनियम 1932 ई0 में विदेश सम्बन्धी अधिनियम 1934 ई0 में भारतीय राज्य सुरक्षा अधिनियम, 1944 ई0 में प्रेस कानून जॉच समिति इत्यादि एक्ट पास हुये।

निष्कर्ष

भारतीय प्रेस के प्रति ब्रिटिश सरकार के दृष्टिकोण तथा समय–2 पर लगाए प्रतिबधों से स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय प्रेस का इतिहास संधर्षो से पूर्ण है। सभी गवर्नर जनरलों ने प्रेस के प्रति अलग–2 दृष्टिकोण अपनाये जैसें लार्ड वेलजली, लार्ड मिंटो, लार्ड एडम, लार्ड कैनिंग तथा लार्ड लिटन भारतीय प्रेस की स्वतन्त्रता के पक्ष में नही थे। वे उस पर प्रतिबध लगाने को सफल भी हुए। लार्ड एल फिस्टन तथा सर टांमस मुनरो ने इनका समर्थन किया। परन्तु लार्ड हेस्टिगस, चार्ल्स मेटकाफ, मैकाले तथा लार्ड रिपन स्वतन्त्र प्रेस के समर्थक थे। परन्तु आश्चर्य की बात तो यह है कि दमनकारी प्रतिबधों के बावजूद प्रेस भारतवासियों को जागृत करने, विभिन्न विचारों से उन्हें अवगत कराने, सरकार की नीतियों की आलोचना कर जनता के समक्ष वास्तविकता को रखने तथा स्वतन्त्रता संग्राम की गरिमा को बनाए रखने में सफल रहा। भारतीय राष्ट्रीयता के विकास में प्रेस का योगदान अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा।

**REFERENCE**

1.–देसाई, ए. आर., भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्टभूमि, मैकमिलन भारत लिमिटेड, बम्बई, 1946 द्य 2–ग्रोवर बी.एल. मजण ंसण् आधुनिक भारत का इतिहास, एस. चन्द एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली 2011 द्य 3.– शुक्ल, आर. एल. ,मकण्द्ध आधुनिक भारत का इतिहास, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय 1998 द्य 4–चन्द, तारा, भारतीय, स्वतन्त्रता, आन्दोलन का इतिहास, टवस.2 सूचना और प्रसारण मन्त्रालय भारत सरकार नई दिल्ली, 1969 द्य 5.–प्रो0 चन्द, बिपिन, मजण ंसण् भारत का स्वतन्त्रता संघर्ष , हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, 1990 द्य 6.–जैन, एम. एस., आधुनिक भारत का इतिहास, विश्व प्रकाशन, नई दिल्ली, 1993 द्य